International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

नारी संघर्ष का दस्तावेज: चक्रव्यूह में औरत

एस. सूर्यावती

प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, शासकीय महाविद्यालय, चोडवरम, जिला अनकापल्लि, आंध्र प्रदेश

शोध सार

चक्रव्यूह में औरत कविता संग्रह में डॉ. मुक्ता ने नारी शोषण, उत्पीड़न, और व्यथा को रेखांकित किया है। स्त्री जीवन से जुड़े प्रत्येक पहलू को अभिव्यक्ति प्रदान की है। इनकी कविता का मूल विषय नारी अस्मिता से जुड़ा हुआ है। पितृसत्तात्मक समाज, दोहरे मानदंड, स्त्री पुरुष के लिए बनाए गए अलग अलग नियमों को खुरेदना चाहती है। स्त्री के मन में उठने वाले अनेक प्रश्नों और उसके मानसिक द्वंद्व को चित्रित किया है। नारी जीवन को विभिन्न दृष्टियों से आंकने की कोशिश की है। नारी संघर्ष मानव इतिहास का एक ऐसा पक्ष है जो समाज में महिलाओं की स्थिति, उनके अधिकारों और उनके सशक्तीकरण के लिए किए गए प्रयासों को दर्शाता है। महिलाओं ने सदियों से पितृसत्तात्मक समाज में अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया है।

बीज शब्द: अंधविश्वास, विसंगति, अबला, सशक्तीकरण, अस्मिता।

स्त्री आदिम काल से पराधीनता की बेड़ियों में जकडी हुई है। इस पराधीनता के पीछे सामाजिक कायदे कानून की मुख्य भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। ये कानून पुरुष द्वारा निर्मित और एकपक्षीय है, इन नियमों को प्रामाणिक बनाने के लिए धर्म का सहारा लिया गया। इस धर्म के आवरण में स्त्रियों के लिए नित्य नयी रूढ़ियों का आविष्कार होता रहा। स्त्रियों पर अनेक पाबंदियां लगा दी गई। आगे चलकर सती प्रथा, पतिव्रता जैसे कठोर नियमों को स्त्री पर थोपा गया। स्त्री मौन रहकर इन नियमों का पालन करती रहीं। महादेवी वर्मा का कहना है कि "अपनी सहज बुद्धि के कारण ही स्त्री ने पुरुषों के साथ अपनी संघर्ष नहीं होने दिया होता तो आज मानव जाति की दूसरी कहानी होती।"[1] डॉक्टर मुक्ता ने स्त्री की अनेक विसंगतियो का पर्दाफाश करते हुए इस काव्य संग्रह में नारी की अंतर्मन की यात्रा कराती है। स्त्री जिन-जिन यातनाओं से, कष्टों से, व्यथाओं से गुजर रही हैं उन सभी विषयों का मर्मस्पर्शी अंकन किया है। विवाह के नाम पर स्त्री को नियमों के जंजीरों से जकड़कर रखते हैं। इस विवाह व्यवस्था को कवइत्री चक्रव्यूह कहती है, जिसे कोई भी स्त्री भेद नहीं कर पाती। लक्ष्मण रेखा को पार नहीं कर सकती। मायके

वाले उसे यह समझाते हैं कि अपने माता-पिता से उसका कोई नाता नहीं। जीवन हो या मरण अपने पति के घर में ही है।

"समझा दी जाती है उसे
मांग के सिंदूर की परिभाषा
अंगूठी, कर्णाभूषण, बिछुओं से सजी-सवरी
पाजेब रूपी बेड़ियों को पांव में धारण कर
माथे पर सजा सुहाग बिंदी
खुशी से गुलामों सा जीवन ढोती"[2]

सबकी खुशी के लिए समझौता करके होठों पर मुस्कान ओढकर, आंसुओं को रोक कर तन्हाई की जिंदगी जीती है। 'आभास' कविता में कवइत्री नारी अस्तित्व की बात करती हुई कहती है कि अपने भीतर की औरत अपने अस्तित्व का आभास दिलाकर नये रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित करती हैं, किंतु- "वह चक्रव्यूह में फंसी/ कहा त्याग पाती हैं परम्पराओं को/ सामाजिक मान्यताओं को/ रूढ़ियों को/ अंधविश्वासों को/ जो उसे विवश करती है/ आँखों पर पट्टी बांध/ गांधारी बन/ पति का अनुसरण करने को"[3]

अलग अलग परिस्थितियों में, रीति रिवाजों में पले बढ़े स्त्री-पुरुष विवाह के बंधन में बंधने से उनके विचार कभी एक नहीं हो सकते। इस स्थिति में भी सिर्फ स्त्री को ही परिस्थितियों से समझौता करना पड़ता है। 'पराश्रिता' कविता में कवित्री ने नारी की उस मानसिक स्थिति का अंकन किया है जो अस्तित्व की तलाश में असफल होकर अपनी सीमाओं के दायरे में कैद जीवन पर्यंत पराश्रित होती है - "न पति उसे अपनाता / न ही पुत्र अपना बन पाता / वह निरंतर आँसू बहाती / अपने भाग्य को कोसती / सबकी खुशी के लिए / जीवन होम करती / फिर भी वह मासूम/ पति की दया पर आश्रित / वही उसका भाग्यविधाता / वहीं उसकी रक्षक"[4]

औरत अर्धांगिनी, सहचरी और सहभागिनी नहीं बल्कि अनुगामिनी है। गांधारी की तरह आँखों पर पट्टी बांधकर पति का अनुशरण करना ही उसकी नियति है। जब भी वह अपने अधिकार के लिए लड़ती है, तब उस पर अनेक लांछन लगा दी जाती है- "परन्तु कहाँ मिल पाती है उसे/ अपने हिस्से की आधी जमीं और आधा आसमां/ लगाए जाते हैं उस पर असंख्य लांछन/ और मिलती है उसे हर दम प्रताड़ना/ कर रहा होता है इंतजार/ मिट्टी के तेल का डिब्बा, दियासलाई,/ गैस का चूल्हा, पंखे से झूलती रस्सी/ तंदूर की दहकती अग्नि/ नदी या छत की फिसलन/ मिलती है उसे सौगात सम"[5]

स्त्री जिंदगी भर पति का विश्वास जीतने के लिए समस्त जीवन होम कर देती है। फिर भी उसे पति से मिलती उपेक्षा, तिरस्कार, अमानुषी व्यवहार बाणों से आहत करते हैं, उनके प्रहार सहते सहते धराशयी हो जाती।

21 वीं सदी में नारी आनेक बंधनों को तोड़कर बाहरी दुनिया में कदम रखती हैं, स्वावलंबी होती हैं तो पुरुष की अहम को चोट लगती है। नारी ने अपने जीवन के हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण बदलाव और प्रगति की है। आधुनिक युग में महिलाएं केवल परिवार और घर तक सीमित नहीं हैं; वे शिक्षा, करियर, विज्ञान, राजनीति, कला, और सामाजिक सुधार के हर क्षेत्र में अपनी जगह बना रही हैं। पुरुष की नजर में स्त्री पराश्रिता है, उसका कोई अपना अस्तित्व नहीं है, स्वतंत्रता का अधिकार नहीं है। हालांकि प्रगति हुई है, लेकिन आज भी महिलाओं को पितृसत्तात्मक मानसिकता, हिंसा, असमानता, और भेदभाव का सामना करना पड़ता है। नारी के प्रति पुरुष के संकुचित विचार की कडी आलोचना की हैं। वह कहती है कि "किया हैं तुम्हारे माता पिता ने तुम्हारा दान/ तुम धरोहर हो मेरी/ समझता हूँ तुम्हे मैं एक अदद गुलाम/ मानना होगा तुम्हें अब मेरा हर फरमान/ है यही अब तुम्हारा घर/ जीने मरने का स्थान/ भूल जाओ, नारी बन पाएंगी कभी सशक्त कर पाएगी अपनी भावनाओं और इच्छाओं को व्यक्त।"[6] 'आँसुओं का सैलाब', 'मैं से तुम', 'अधिकार', 'अस्तित्व' कविताओं में औरत अस्तित्व हो तलाशती, अपने को ढूँढती नजर आती हैं।

भारतीय समाज में वैधव्य स्त्री के लिए शाप है। समाज में विधवा पुनर्विवाह की मान्यता न होने के कारण विधवा समस्या ने विकराल रूप धारण किया है। सीमांतनी उपदेश की लेखिका ने विधवाओं पर होने वाले अत्याचार का विस्तार से वर्णन किया है। वह लिखती हैं कि "इस तकलीफ से सति होने का रिवाज अच्छा था। तड़पाकर मारने से बहुत औरतें मर जाती है, इसी हालत में सन्निपात हो जाता"[7] 'वैधव्य' कविता में कवइत्री कहती हैं कि वैधव्य की कल्पना मात्र से ही औरत का मन सिहर उठता। जीवन में सुनामी आ जाता। समाज के चीत्कार का भय उसे विह्वल कर देता। ज़माना बदल गया किंतु मानव का सोच संकुचित ही रह गया। "बदला ज़माना/ कहाँ बदली मानव की सोच/ कल तक थी जो गृहलक्ष्मी/ मनहूस कहलाती/ ----------/ शुभ अवसर पर भी नहीं कभी/ उसकी उपस्थिति दर्ज कराते/ उससे नफरत करते हैं/ हरदम इलज़ाम लगाते/ कहा समझ पाते जगवाले/ उसकी व्यथा कथा"[8] विधवा समस्या केवल एक सामाजिक मुद्दा नहीं है, बल्कि यह समाज की सोच और दृष्टिकोण से जुड़ी गहराई तक जमी हुई समस्या है। शिक्षा, जागरूकता, और सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव से इस समस्या का समाधान संभव है। यह जरूरी है कि विधवाओं को समाज में बराबरी का दर्जा और सम्मान दिया जाए, ताकि वे भी एक गरिमापूर्ण जीवन जी सकें।

'सोच पुरुष की' कविता में नारी की उस वेदना को प्रस्तुत किया है जो ससुराल जाने के बाद उसकी आकांक्षाओं का गला जबर्दस्ती घोट डालते है। पुरुष पर पूर्ण रूप से निर्भर होने के कारण स्त्री को गुलाम बनाकर मनचाहे रूप में उसे प्रताड़ित कर अपने अहम को प्रदर्शित करता है- "हर पल उसे घायल करने को तत्पर/ उसके रिसते जख्मों को देख/ आनंदित होता, सुकून पाता/ उसे समूल नष्ट कर/ विजय पर्व के रूप में आयोजन कर/ खुशी का इजहार करता/ परन्तु अहम प्रदर्शन उसका लक्ष्य/ उसकी आखिरी मंजिल"[9]

समाज में माँ की भूमिका महत्वपूर्ण माना जाता हैं। कहा जाता हैं कि भगवान हर जगह नहीं रह सकता। इसलिये माँ का सृजन किया है। माँ हर समय हर जगह समझौता करती हैं। वह भी खुशी से। माँ की सहनशीलता का वर्णन करते हुए कवइत्री लिखिती हैं कि "स्नेह की प्रतिमा/ त्याग की प्रतिमूर्ति/ खुद को मिटा/ सबका आंचल खुशियों से भरती/...../उम्र के आखिरी पडाव पर भी अपने परिवार को एकसूत्र में पिरोये रखने का/ हर पल स्वप्न संजोती उपक्रम करती/..... हंसते हंसते सब कुछ सह जाती।"[10]

डॉ. मुक्ता ने स्त्री से जुडी अनेक प्रश्नों का विश्लेषण इन कविताओं के माध्यम से किया हैं। स्त्रियों की दुनिया में तकलीफें और छटपटाहट को अभिव्यक्ति दी हैं। नारी ही संभवतः नारी जीवन के उन भीतरी अंधेरों में जा सकती और उनकी यंत्रणाओं और बेडियों के बारे में लिख सकती हैं। नारी संघर्ष न केवल महिलाओं के लिए बल्कि पूरे समाज के लिए प्रासंगिक है। जब महिलाएं स्वतंत्र, सशक्त और समान होंगी, तब ही समाज प्रगति कर सकता है। यह संघर्ष केवल महिलाओं का नहीं, बल्कि मानवता की समग्र भलाई के लिए है।

संदर्भ स्रोत:

1. महादेवी वर्मा : श्रृखला की कडियाँ - पृ.सं.
2. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं. 14
3. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं. 18
4. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं. 24
5. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं. 25
6. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं 50
7. अज्ञात हिंदू लेखिका : सीमंतनी उपदेश - पृ.सं. 90
8. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं.69
9. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं. 21
10. डॉ. मुक्ता : चक्रव्यूह में औरत - पृ.सं. 48